केशव-ग्रंथावली

खंड १

(रसिकप्रिया और कविप्रिया)

संपादक

श्री विश्वनाथप्रसाद मिश्र

हिंदी-विभाग, काशी विश्वविद्यालय

१९५४

हिंदुस्तानी एकेडेमी

उत्तरप्रदेश, इलाहाबाद

प्रथम संस्करण : १९५४ : २००० प्रतियाँ
मूल्य पाँच रुपये

मुद्रक : राय आनन्द कृष्ण
शारदा मुद्रण : ठठेरी बाजार, बनारस

(दोहा)

राधा राधारमन के कहे यथामति हाव।
ढिठई 'केसवराइ' की छमियो कबि कबिराव ॥५७॥

इति श्रीमन्महाराजकुमारश्रीइंद्रजीतविरचितायां रसिकप्रियायां राधिकाकृष्णहावभाववर्णनं नाम षष्ठः प्रभावः ॥६॥

७

अथ अष्ट नायिका-वर्णन–(दोहा)

ये सब जितनी नायिका, बरनी मति-अनुसार।
'केसवदास' बखानियै ते सब आठ प्रकार ॥१॥
स्वाधिनपतिका, उत्कहाँ, बासकसज्जा नाम।
अभिसंधिता बखानियै और खंडिता बाम ॥२॥
'केसव' प्रोषितप्रेयसी लब्धाबिप्र सु आनि।
अष्ट नाइका ये सकल अभिसारिका सुजानि ॥३॥

अथ स्वाधीनपतिका-लक्षण–(दोहा)

'केसव' जाके गुन-बँध्यो सदा रहै पति संग।
स्वाधिनपतिका तासु कौं, बरनत प्रेम-प्रसंग ॥४॥

प्रच्छन्न स्वाधीनपतिका, यथा–(सवैया)

'केसव' जीवन जो ब्रज को पुनि जीवहु तें अति बापहि भावै।
जापर देव-अदेव-कुमारिनि वारत माइन बार लगावै।
ता हरि पै तू गँवार[५] की बेटी महावर पाइ झवाँइ दिवावै।
हौं तौ बची अब हाँसिनि हू, ऐसें और जौ देखै तौ ऊतरु आवै ॥५॥

प्रकाश स्वाधीनपतिका, यथा–(कबित्त)

चोली को सो पान तोहि करत सँवारिबोई,
मुकुर ज्यौं तोहीं बीच मूरति समानी है।
तोहीं तियदेवता पै पायो पति 'केसोदास',
पतिनी बहुत पतिदेवता बखानी है।
तेरे मनोरथ भागीरथ-रथ पाछै पाछै,
डोलत गुपाल मेरो गंगा को सो पानी है।

---

[५] गँवार–अहीर (नवल०)।

ऐसी बात कौन जु न मानी, सुनि, मेरी रानी,
उनकें तौ तेरी बानी बेद की सी बानी है ॥६॥

अथ उत्का-लक्षण—(दोहा)

कौनहुँ हेत न आइयो, प्रीतम जाके धाम।
ताकौं सोचति सोच हिय 'केसव' उत्का बाम ॥७॥

प्रच्छन्न उत्का, यथा—(कवित्त)

किधौं गृह-काज कै न छूटत सखा-समाज,
किधौं कछू आज व्रत-बासर बिभात तैं।
दीनो तैं न सोधु, किधौं काहू सौं भयो बिरोधु,
उपज्यो प्रबोधु किधौं उर अवदात तैं।
मुख में न देहु किधौं मोही सौं कपट-नेहु
किधौं देखि मेहु अति डरे अधिरात तैं।
किधौं मेरी प्रीति की प्रतीति लेत 'केसोदास'
अजहूँ न आए मन सु धौं कौन बात तैं ॥८॥

प्रकाश उत्का, यथा—(सवैया)

सुधि भूलि गई, भुलए किधौं काहू कि भूलेई डोलत बाट न पाई।
भीत भए किधौं 'केसव' काहू सौं, भेंट भई कोऊ भामिनि भाई।
मग आवत हैं किधौं आइ गए, किधौं आवहिंगे सजनी सुखदाई।
अब आए न नंदकुमार बिचारि, सु कौन बिचार अबार लगाई ॥९॥

अथ बासकसज्जा-लक्षण—(दोहा)

बासकसज्जा होइ सो, कहि 'केसव' सबिलास।
चिंतवै रति गृह-द्वार त्यौं पिय-आवनि की आस ॥१०॥

बासकसज्जा, यथा—(कवित्त)

चंदन बिटप बपु कोमल अमल दल,
ललित वलित लता लपटी लवंग की।
'केसोदास' तामें दुरी दीप की सिखा सी दौरि,
दुरवति नील बास दुति अंग अंग की।
पौन पानी पंछी पसु बस सद जित जित
होइ तित तित चौंकि चाहैं चोप संग की।
नंदलाल-आगम बिलोकें कुंजजाल बाल,
लीनी गति तेहीं काल पंजर-पतंग की ॥११॥

---

[६] बीच-महँ (बाल०)। बेद-देव (बाल०)।

प्रकाश वासकसज्जा, यथा—(सवैया)

भाषति है सुख-बैन सखी, सहुलास हियें / अभिलाषनि जोहै।
कोमल हासनि नैन बिलासनि अंग-सुबासनि कै मन मोहै।
मूरतिवंति किधौं तुलसी तुलसी-बन मैं, रति-मूरति को है।
कुंज बिराजति गोपबधू कमला जनु कुंज-कुटी महिं सोहै ॥१२॥

अथ अभिसंधिता-लक्षण—(दोहा)

मान मनावत हूँ करै, मानद को अपमान।
दूनो दुख तिन बिनु लहै अभिसंधिता बखान ॥१३॥

प्रच्छन्न अभिसंधिता, यथा—(कवित्त)

बार बार बोले जब बोल्यो न बालिस तब,
बालक ज्यों बोलिबे कौं कत बिललातु है।
ज्यों ज्यों परे पाइनि त्यों पाइन तें पीन भयो,
होतु कहा अब कियें माखन सो गातु है।
'केसोदास' सब छाड़ि कियो हठ ही सौं हेत,
बाहु छाड़ि जिय जिये बिनु कहा जातु है।
ऐसे प्यारे पीय ही सौं मान्यो न मनायो तब,
ऐसी तोहिं बूझियै जु पाछैं पछितातु है ॥१४॥

प्रकाश अभिसंधिता, यथा—(सवैया)

पाइ परैं हूँ तें प्रीतम त्यौं कहि 'केसव' क्यौं हूँ न मैं दृग दीनी।
तेरी सखी सिख सीखी न एक हूँ रोष ही की सिख सीखि जु लीनी।
चंदन चंद समीर सरोज जरै दुख देह भई सुख हीनी।
मैं उलटी जु करी बिधि मोँ कहँ न्यायनि हौं उलटी बिधि कीनी ॥१५॥

अथ खंडिता-लक्षण—(दोहा)

आवन कहि आवै नहीं आवै प्रीतम प्रात।
जाके घर सो खंडिता कहै जु बहु बिधि बात ॥१६॥

प्रच्छन्न खंडिता, यथा—(कवित्त)

आँखिनि जौ सूझत न काननि तौ सुनियत,
'केसोदास' जैसे तुम लोकनि में गाए हौ।
बंस की बिसारी सुधि काक ज्यौं चुनत फिरौ,
जूठे सीठे सीथ सठ-ईठ ढीठ ठाए हौ।
दूरि दूरि करत हूँ दौरि दौरि गहौ पाइ,
जानौं न कुठौर ठौर जानि जिय पाए हौ।

काको घर घालिबे कौं बसे कहाँ घनस्याम,
घूघू ज्यौं घुसन प्रात मेरे गृह आए हौ ॥१७॥

प्रकाश खंडिता, यथा-(सवैया)

आजु कछू अँखियाँ,हरि, और सी मानौं महावर माहँ रँगी हैं।
मोहन मोही सी लागति मोहिं इतैं पर मोहन मोह लगी हैं।
मेरी सौं मोसहुँ मानहु बेगि हियैं रस-रोष की रीति जगी हैं।
मेरे बियोग के तेज तचीं किधौं 'केसव' काहू के प्रेम पगी हैं ॥१८॥

अथ प्रोषितपतिका-लक्षण-(दोहा)

जाकों प्रीतम दै अवधि, गयो कौन हूँ काज।
ताकों प्रोषितप्रेयसी कहि बरनत कबिराज ॥१९॥

प्रच्छन्न प्रोषितपतिका, यथा-(सवैया)

'केसव' कैसेहूँ पूरबपुन्य मिल्यो मनभावतो भाग भर्यो री।
जानै को माई,कहा भयो,क्योंहूँ जु औधि को आधिक द्योस टर्यो री।
ताकहु तू न अजौं हँसि बोलै जऊ मेरो मोहन पाइ पर्यो री।
काठहू तें हठ तेरो कठोर इतैं बिरहानल हू न जर्यो री ॥२०॥

प्रकाश प्रोषितपतिका, यथा-(सवैया)

औधि दै आए उहाँ उनसौं, यह भोजन कै अबहीं हम ऐहैं।
ताकहँ सौं अब लौं बहराइ कै राखी बर्याइ,मरू करि मैं हैं।
बैठे कहा इनके ढिग 'केसव' जाहु नहीं कोउ जाइ जु कैहैं।
जानत हौ उनि आँखिनि तें अँसुवा उमगे बहुर्यौ पुनि रैहैं ॥२१॥

अथ विप्रलब्धा-लक्षण-(दोहा)

दूती सौं संकेत कहि लैन पठाई आप।
लब्धाबिप्र सो जानियै अनआए संताप ॥२२॥

प्रच्छन्न विप्रलब्धा, यथा-(सवैया)

सूल से फूल सुबास कुबास सी भाकसी से भए भौन सभागे।
'केसव' बाग महाबन सो जुर सी चढ़ी जोन्ह सबै अँग दागे।
नेह लग्यो उर नाहर सो निसि नाह घरीक कहूँ अनुरागे।
गारी से गीत बिरी बिष सी सिगरेई सिंगार अँगार से लागे ॥२३॥

प्रकाश विप्रलब्धा, यथा-(कवित्त)

देखत उदधिजात देखि देखि निज गात,
चंपक के पात कछू लिख्यो है बनाइ कै।
सकल सुगंध डारि फूल-माल तोरि डारि,
दूतिका कौं मारि पुनि बीरी बगराइ कै।

लै लै दीह साँस तजि बिबिध बिलास हास,
'केसोदास' ह्वै उदास चली अकुलाइ कै।
सेइ कै सँकेत सुनो, कान्हजू सों बोलि ऊनो,
मोसों कर जोरि दूनो दूनो दुख पाइ कै॥२४॥

अथ अभिसारिका-लक्षण--(दोहा)

हित तें, कै मद-मदन तें, पिय पै मिलै जु जाइ।
सो कहियै अभिसारिका बरनी त्रिबिध बनाइ॥२५॥

अथ स्वकीया अभिसारिका-लक्षण--(दोहा)

अति सलज्ज पग मग धरै चलत बधुन के संग।
स्वकिया को अभिसार यह भूषन-भूषित अंग॥२६॥

परकीया अभिसारिका, यथा--(दोहा)

जनी सहेली सोभहीं बंधु-बधू-सँग चार।
मग में देइ बराइ डग, लज्जा को अभिसार॥२७॥

प्रच्छन्न प्रेमाभिसारिका, यथा--(कबित्त)

लीनो हम मोल अनबोलें आईं जान्यो मोह,
मोहिं घनस्यामं, घनमाला बोलि लाई है।
देख्यो ह्वैहै दुख जहाँ देह हू न देखी परै,
देखी कैसें? बाट 'केसो' दामिनी दिखाई है।
ऊँचे नीचे बीच-कीच कंटकनि परे पग
साहस-गयंद-गति अति सुखदाई है।
भागी भयकारी निसि निपट अकेली तुम,
नाहीं प्राननाथ, साथ प्रेमजू सहाई है॥२८॥

प्रकाश प्रेमाभिसारिका, यथा--(कबित्त)

नैननि की अतुराई बैननि की चतुराई,
गात की गुराई न दुरति दुति चाल की।
आपनें चरित्रनि के चित्रत बिचित्र चित्र,
चित्रनी ज्यौं, सोहै साथ पुत्रिका गुवाल की।
चंद्र के समान चारु चाय सौं चढ़ाएँ फिरै,
करिकै तिहारे मृग-नैननि की पालकी।

---

[२६] पग०--डगमग भरी (बाल०)। संख्या २६-२७ 'रस०' में नहीं हैं।
[२८] परे--पीड़े (नवल०)। [२९] साथ-संग (रस०)।

कीजै पय-पान अरु खैयै पान, प्रानप्यारे
आई है जू आई अलबेली ग्वालि कालि की ॥२६॥

प्रच्छन्न गर्वाभिसारिका, यथा—(सवैया)

लाड़िली लीली कलोरी लुरी कहूँ, लाल, लुके कहूँ, अंग लगाइ कै।
आजु तौ 'केसव' कैसहुँ लेरुवै लागन देति न देखहु आइ कै।
बेगि चलौ उठि आई लिवावन दौरि अकेलियै हौं अकुलाइ कै।
भूलिहुँ गोकुल गाँउ में, गोविंद, कीजै गरूर न गाइ चराइ कै ॥३०॥

प्रकाश गर्वाभिसारिका, यथा—(कवित्त)

चंदन चढ़ाइ चारु अंबर के उर हारु,
सुमन-सिँगार सोहै आनँद के कंद ज्यौं।
वारौ कोरि रतिनाथ, बीन में बजावै गाथ,
मृगज मराल साथ, बानी जगबंद ज्यौं।
चौंकि चौंकि चकई सी सौतिन की दूती चलीं
सौतें भईं दीनी अरबिंद दुति मंद ज्यौं।
तिमिर-बियोग भूले, लोचन चकोर फूले
आई ब्रजचंद चलि चंदावलि चंद ज्यौं ॥३१॥

प्रच्छन्न कामाभिसारिका, यथा—(कबित्त)

उरझत उरग, चपत चरननि फन,
देखत बिबिध निसिचर दिसि चारि के।
गनति न लागत मुसल-धार, सुनत न
झिल्लीगन-घोष, निरघोष जलधारि के।
जानति न भूषन गिरत, पट फाटत न
कंटक अटकि उर उरज उजारि के।
प्रेतनि की पूछै नारि, कौन पै तैं सीख्यो यह
जोग, कैसो सारु अभिसारु, अभिसारिके ॥३२॥

प्रकाश कामाभिसारिका, यथा—(सवैया)

गोप बड़े बड़े बैठे अथाइन 'केसव', कोटि सभा अवगाहीं।
खेलत बालक-जाल गलीन में बाल बिलोकि बिलोकि बिकाहीं।
आवति जाति लुगाईं चहूँ दिसि घूँघट में पहिचानति छाहीं।
चंद सो आननु काढ़ि कहा चली, सूझतु है कछु तोहिं की नाहीं ॥३३॥

---

[२९] चढ़ाएँ फिरै—चढ़ी फिरति (बाल०, नवल०)।
[३०] उठि—चलि (नवल०)। लिवावन—बुलावन (नवल०)।

(दोहा)

'केसवदास' सु तीन बिधि, बरनी स्वकिया नारि।
परकीया द्वै भाँति पुनि आठ आठ अनुहारि ॥३४॥
उत्तम मध्यम अधम अरु तीन तीन बिधि जान
प्रकट तीन सै साठ तिय 'केसवदास' बखान ॥३५॥

अथ उत्तमा-लक्षण–(दोहा)

मान करै अपमान तें तजै मान तें मान।
पिय देखें सुख पावई ताहि उत्तमा जान ॥३६॥

उत्तमा, यथा–(सवैया)

होइ कहा अब के समुझे न तबै समुझे जब हे समुझाए।
एक ही बंक बिलोकनि माहँ अनेक अमोल बिबेक बिकाए।
जानिपनो न जनावहु जी जनमावधि लौं उहि जानि हौ पाए।
बात बनाइ बनाइ कहा कहौ लेहु मनाइ मनाइ ज्यों आए ॥३७॥

अथ मध्यमा-लक्षण–(दोहा)

मान करै लघु दोष तें छोड़ै बहुत प्रनाम।
'केसवदास' बखानियै ताहि मध्यमा बाम ॥३८॥

मध्यमा, यथा–(सवैया)

भूलेहूँ सूधें नहीं चितयो इहिं कान्ह कियो लचि लालच केतौ।
हाहा कै हारि रहे मनमोहन पाइ परे त्यों परेई रहे तौ।
हौं तौ यहै तब ही की बिचारति होतौ गुमान क्यों याहि धौं एतौ।
लाँबी लटैं अरु पातरी देह जु नैंक बड़ी बिधि आँखि न देतौ ॥३९॥

अथ अधमा-लक्षण–(दोहा)

रूठै बारहिं बार जो तूठै बेहीं काज।
ताही सों अधमा सबै कहि बरनत कबिराज ॥४०॥

अधमा, यथा–(सवैया)

काटौं कपट्ट जो कान्ह सों कीजै री बाँटौं वे बोल कुबोल कसाई।
फारौं सु घूँघट ओट अटै सोई दीठि फोरौं अध कों जु धसाई।
'केसव' ऐसी सखीन कों मारौं सिखै कै करैं हित की जु हँसाई।
बारहि बार को रूसबो बारौं बहाऊँ सु बुद्धि बियोग-बसाई ॥४१॥

---

[३८] मनमोहन-पुनि केसव (बाल०)।

(दोहा)

इहि बिधि नायक-नायिका बरनहुँ सहित बिबेक।
जाति काल बय भाव तें 'केसव' जानि अनेक ॥४२॥

अथ अगम्या नायिका (दोहा)

तजि तरुनी संबंध की, जानि मित्र, द्विजराज।
राखि लेइ दुख भूख तें ताकी तिय तें भाज ॥४३॥
अधिक बरन अरु अंग घटि, अंत्यज जन की नारि।
तजि बिधवा अरु पूजिता रमियहु रसिक बिचारि ॥४४॥
यह संजोग सिंगार की 'केसव' बरनी रीति।
बिप्रलंभ सिंगार की रीति कहौं करि प्रीति ॥४५॥

इति श्रीमन्महाराजकुमारइंद्रजीतविरचितायां रसिकप्रियायामष्ट
नायिकासंभोगश्रृंगारवर्णनं नाम सप्तमः प्रभावः ॥ ७ ॥

८

अथ बिप्रलंभ श्रृंगार-लक्षण-(दोहा)

बिछुरत प्रीतम प्रीतमा होत जु रस तिहिं ठौर।
बिप्रलंभ सिंगार कहि बरनत कबि सिरमौर ॥१॥

अथ बिप्रलंभ श्रृंगार-भेद-वर्णन-(दोहा)

बिप्रलंभ सिंगार को चारि प्रकार प्रकास।
प्रथम पूर्ब-अनुराग पुनि करुना, मान, प्रबास ॥२॥

अथ पूर्वानुराग-लक्षण-(दोहा)

देखतहीं दुति दंपतिहिं उपजि, परत अनुराग।
बिन देखें दुख देखियै सो पूरब-अनुराग ॥३॥

श्रीराधिकाजू को प्रच्छन्न पूर्वानुराग, यथा-(कवित्त)

फूल न दिखाव सूल फूलत है हरि बिनु
दूरि करि माल बाल-ब्याल सी लगति है।
चँवर चलाव जिन, बीजन हलाव मति
'केसव' सुगंध बाय बाय-सी लगति है।